मनुष्य को 'सच्चा मनुष्य' बनाने का एक छोटा किंतु महान प्रयत्न!

कर्मयोग गुरुकुल की संक्षिप्त विवरण पत्रिका।

गत अङ्क में कर्मयोग गुरुकुल खुलने की सूचना छपी थी। अब उसकी रूप रेखा प्रकाशित की जारही है। चैत्र सुदी १ सं० २००१ वि. तदनुसार ता० २५ मार्च सं० ४४ से गुरुकुल खुल जायगा। जो यह शिक्षा प्राप्त करने के इच्छुक हों स्वीकृति प्राप्त करने के लिए पत्र व्यवहार करलें।

उद्देश्य—(१) मनुष्य वास्तविक अर्थ में "मनुष्य" बनकर इस जीवन में ही स्वर्ग का आनन्द प्राप्त करें। यही इस गुरुकुल का उद्देश्य है।

आधार ग्रन्थ—श्री सद्भगवद्गीता।

प्रवेश—(२) १६ वर्ष से अधिक आयु के, निरोग, हिन्दी भाषा को अच्छी तरह जानने वाले, शिष्ट स्वभाव के छात्र ही प्रवेश पा सकेंगे। यहाँ पूर्ण रूप से अनुशासन में रहना पड़ेगा और तपस्वी जीवन बिताना पड़ेगा।

स्वीकृति—(३) शिक्षार्थी अपना शारीरिक, बौद्धिक, पारिवारिक तथा व्यवसायिक परिचय विस्तार पूर्वक लिख भेजें और यह भी लिखें कि वे किन तारीखों में मथुरा आ सकते हैं। बिना स्वीकृति के कोई सज्जन यहाँ न पधारें।

शिक्षाक्रम—(४) नीचे ६० विषय दिये हुए हैं। इन विषयों की शिक्षाएं यहां दी जायेंगी। साधारणतः इसके लिए एक मास का समय नियत है। जो लोग इससे कम या अधिक समय रहना चाहें, वे कारण लिखकर इसकी स्वीकृति प्राप्त करें।

शारीरिक शिक्षा—(१) रोगों से बचाव (२) स्वास्थ्य कायम रखना (३) दुर्बल अंगों को पुष्ट करना (४) जीवनी शक्ति बढ़ाना (५) बुरी आदतों से छुटकारा (६) सात्विक आहार विहार (७) परिश्रम में रुचि (८) शरीर को सहनशील बनाना (९) खिलता हुआ चेहरा (१०) सौन्दर्य की वृद्धि (११) तेजस्विता (१२) नियमितता (१३) इन्द्रिय भोगों की मर्यादा (१४) दीर्घ जीवन (१५) रोगी होने पर स्वयं चिकित्सा।

व्यावहारिक शिक्षा—अपने आपे के साथ सद्व्यवहार (२) शिष्टाचार और सभ्यता (३) बड़ों का सम्मान (४) छोटों से स्नेह (५) बराबर वालों से मैत्री (६) दाम्पत्ति जीवन का स्वर्ग (७) अपनी साख जमाना (८) नौकर और मजूरों से काम लेना (९) रूठे को मनाना (१०) असहमत को सहमत करना (११) महापुरुषों से सम्पर्क (१२) दुष्टों का दमन (१३) कूट नीति की आवश्यकता (१४) मूर्खों की उपेक्षा (१५) ठहरो और प्रतीक्षा करो।

सामाजिक शिक्षा—(१) मनुष्य के अधिकार (२) नागरिकता का उत्तर दायित्व (३) दूसरों के प्रति अपना कर्तव्य (४) विवाह की समस्या (५) मजहबों और फिरकों का रहस्य (६) रीति रिवाजों की विवेचना (७) समाज सुधार की आवश्यकता (८) परमतावलम्बियों का आदर (९) जिओ और जीने दो (१०) करो या मरो (११) गलती को सुधारना (१२) अनीति का विरोध (१३) दलित पीड़ित और पतितों के प्रति अपना कर्तव्य (१४) सेवा मार्ग (१५) देशभक्ति।

आर्थिक शिक्षा—(१) धन की उपयोगिता (२) दरिद्रता का पाप (३) धन क्या है (४) कितना धन चाहिए (५) धन की आकांक्षा (६) धन उपार्जन के सिद्धान्त (७) धनवान बनने के उपाय (८) धन की सुरक्षा (९) धन का सदुपयोग (१०) धन का दुरुपयोग (११) धन के कारण उत्पन्न होने वाले गुण दोषों की जानकारी (१२) धनी की जिम्मेदारी (१३) निर्धन का कर्तव्य (१४) धन प्राप्ति के अनुचित मार्ग (१५) धन का उन्माद और उसके परिणाम।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

मानसिक शिक्षा—[१] अज्ञान से परिचित रहना (२) विद्या से प्रेम (३) दुर्भाव पूर्ण कल्पनाऐं (४) सद्भाव पूर्ण कल्पनाऐं (५) सत्य की आराधना (६) रुचि और अरुचि (७) मानसिक कमजोरियाँ (८) विचारों की अद्भुत शक्ति (९) वर्तमान की समस्याऐं (१०) उत्साह लगन, दृढ़ता और तत्परता (११) धैर्य साहस और विवेक (१२) मनको वश में करना (१३) मनोबल की वृद्धि (१४) एकाग्रता और दिव्य दृष्टि (१५) मनोरंजन ।

आध्यात्मिक शिक्षा—(१) प्रकाश की ओर यात्रा (२) जीवन का उद्देश्य और उसकी पूर्ति (३) स्वार्थ और परमार्थ (४) हँसी खुशी का जीवन (५) दैवी संपदाऐं-सद्गुण (६) आत्म सुधार (७) यश प्रतिष्ठा और नेतृत्व (८) आत्मोन्नति का अर्थ (९) पुण्य और पाप की पहचान (१०) आत्मस्वरूप का ज्ञान (११) ईश्वर और जीव का संबंध (१२) गीतोक्त निष्काम कर्मयोग (१३) गृहस्थ में सन्यास (१४) शान्ति की गोद में [१५] स्वर्ग, मुक्ति और परमपद ।

शिक्षा व्यवस्था—उपरोक्त शिक्षा इतनी महान है कि शिक्षार्थी के अन्तःकरण में शिक्षक अपना अन्तःकरण पिरोकर ही पूराकर सकता है। ऐसे शिक्षकों की अभी भारी कमी है। कर्मयोग गुरुकुल की सारी शिक्षा आचार्य श्रीराम शर्मा द्वारा ही संयोजित होगी। एक शिक्षक एक समय में थोड़े ही शिक्षार्थियों की पूरी जिम्मेदारी के साथ शिक्षा दे सकता है। इसलिए एक समय में पाँच से लेकर दस तक ही शिक्षार्थी लिये जावेंगे। अधिक नहीं। शिक्षा के लिए सैकड़ों आवेदन आने की आशा है, क्रमानुसार यह निर्णय होगा कि कौन महानुभाव कब पधारें।

शिक्षा प्राप्ति—पढ़ने के लिए पुस्तकें गुरुकुल के पुस्तकालय में मौजूद हैं, उन्हें पढ़ने के लिए प्राप्त किया जा सकता है। पठन, भाषण, मनन, लेखन, चिन्तन और विचार विनिमय द्वारा शिक्षा प्राप्त की जायगी। समय समय पर अन्य प्रतिष्ठित विद्वानों को बुलाकर भी भाषण कराये जावेंगे। प्रार्थना, वायुसेवन, व्यायाम, कथा, सत्संग, विचार विनिमय, नित्य के कार्य होंगे। ब्रज के तीर्थ स्थानों की एक यात्रा भी हुआ करेगी। वेदारंभ संस्कार के साथ शिक्षा आरंभ होगी और समावर्तन संस्कार के साथ समाप्त होगी। शिक्षार्थी चाहे किसी भी आयु या स्थिति का हो उसे एक ब्रह्मचारी की भाँति ही रहना होगा।

फीस—गुरुकुल में शिक्षार्थी से किसी प्रकार की फीस नहीं ली जायगी।

आहार विहार की व्यवस्था—भोजन का खर्च स्वयं उठाना होगा। रसोइया भोजन बनावेगा। खर्च का हिसाब शिक्षार्थियों की चुनी हुई कमेटी रखेगी। हर एक के हिस्से में जितना पड़ेगा, उतना लिया जायगा। अनुमानतः १२) से १५) के बीच में भोजन खर्च पड़ेगा। ऋतु के अनुसार कपड़े व बिस्तर तथा थाली लोटा, कटोरी साथ लाने चाहिए। सोने के लिए तख्त गुरुकुल में होंगे। नियत दिन चर्या के अनुसार सारा कार्यक्रम रखना होगा।

गारंटी—यहाँ शिक्षा प्राप्त हुए छात्रों के स्वभाव विचार, चरित्र और कार्यों में इतना परिवर्तन होजाने की गारंटी की जा सकती है कि अपने संबंध में उन्हें स्वयं आत्मसंतोष रहेगा और दूसरे लोग उनकी सुजनता को सराहेंगे। स्वास्थ्य, वैभव, प्रतिष्ठा, आदर, नेतृत्व, यश, उन्नति तथा आत्मशान्ति का उन्हें प्रत्यक्ष अनुभव होगा।

आडम्बर नहीं—किराये के एक साधारण से मकान में अखंड-ज्योति कार्यालय और कर्मयोग गुरुकुल है। दस व्यक्तियों के रहने के लिए स्थान का, चारपाइयों का पढ़ने के लिए डेस्कों का प्रबंध है। छोटासा—छोटासा—यह बाह्यरूप ही देखने को मिलेगा! ज्ञान, अनुभव और आत्मसाधना के फल स्वरूप जो वस्तुऐं मिलनी चाहिए वह यहां हैं। पैसा हमारे पास नहीं है इसलिए वह विशाल विस्तार भी यहां नहीं है जो पैसे के द्वारा ही संभव है।

व्यवस्थापक—'अखण्डज्योति कार्यालय, मथुरा।
[घीयामंडी रोड, किशोरीरमण गर्ल्स स्कूल के सामने]

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

सुधा बीज बोने से पहिले, काल कूट पीना होगा।
पहिन मौत का मुकुट विश्व-हित, मानव को जीना होगा॥

वर्ष ५ | मथुरा, १ मार्च सन् १९४४ ई० | अङ्क ३

गायक से

(ले०—श्री महावीर प्रसाद विद्यार्थी; टेढ़ा-उन्नाव)

गायक, ऐसा राग सुना दे !
युग-युग के नीरस-मानस में, लहरा दे जो अमृत-धारा !!
युग-युग से सोये मानव के, स्वप्नों की तोड़े जो कारा,
जीवन-सरिता-तटपर सञ्चित, कल्मष में जो आग लगादे;
गायक, ऐसा राग सुना दे !
पलकों के मादक-कम्पन में, गूँथ रहा भावों की लड़ियाँ !!
उलझा नागिन-सी अलकों में, खोता क्यों ये स्वर्णिम घड़ियाँ,
छोड़ यामिनी का अञ्चल तू, मधुर-उषा का 'दीप'- जलादे;
गायक, ऐसा राग सुना दे !
स्वार्थ-साधना-रत मानव की, नित्य पिपासा बढ़ती जाती !!
क्षण-क्षण महाद्वेष की ज्वाला, अपना भीषण रूप दिखाती,
सुरभित जीवन का कण-कण हो, मधुमय सुन्दर सुमन खिलादे;
गायक, ऐसा राग सुना दे !
बुझी हुई वह ज्योति जगे फिर, दीप्त तमोमय अन्तस्तल हो !!
अविनश्वर उल्लास-विभासे, विहसित जल-थल-अम्बरतल हो,

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

उतर स्वर्गसे भूमंडल पर, सत् की अमर ज्योति आती है
वेणु बजाती सत्य-प्रेम की, सुमधुर न्याय गान गाती है

मथुरा १ मार्च सन् १९४४ ई०

संगति की महिमा।

विद्वान बेकन का कथन है कि "मनुष्य कोरे कागज के समान है। वह जिन परिस्थितियों में रहता है, जिन विचारों से प्रभावित होता है, उसी ढाँचे में ढल जाता है।" एक सच्चा जैनी अपने धार्मिक विश्वासों की प्रेरणा से जीव दया को अपना धर्म मानता है। किन्तु एक सच्चा मुसलमान, अपने मजहब में अत्यंत निष्ठा रखता हुआ ईश्वर के नाम पर कई पशुओं की कुर्बानी करता है। यदि दोनों के अन्तः करणों की परीक्षा कीजाय तो दोनों ही समान रूप से अपने को धर्मारुढ़ अनुभव करते पाये जायेंगे। जैनी का दृढ़ विश्वास है कि जीव दया करके मैंने उचित कर्तव्य किया। इसी प्रकार मुसलमान का भी निश्चित मत है कि उसने पशु वध करके ईश्वरीय आज्ञा का पालन किया।

जीव दया और पशु वध यह दोनों कार्य आपस में एक दूसरे से बिलकुल विपरीत हैं फिर भी विचार भिन्नता के कारण सच्चे भाव से उन्हें अपनी अपनी दृष्टि से ठीक मानते हैं। योरोपियन लोग मलत्याग के उपरान्त कागज से पोंछ कर शुद्धि कर लेते हैं उनकी इस प्रथा को हिन्दू लोग बुरी दृष्टि से देखते हैं। एक योरोपीयन महिला से इस विषय में ... हिन्दुओं की एक लोटा जल से मल शुद्धि करने को बहुत बुरा बताया। उनका कहना था कि इस प्रकार विष्ठा का कुछ भाग पानी में मिल कर गुदा स्थान के चारों ओर फैल जाता है और इससे अशुद्धि और भी बढ़ जाती है। यदि जल से शुद्धि करनी हो तो नल के नीचे झुक कर बहुत देर तक शुद्धि करनी चाहिए अन्यथा एक लोटे जल से की हुई शुद्धि तो अशुद्धि को और अधिक बढ़ा देने वाली है। उन महिला की दृष्टि से कागज की शुद्धि उचित थी और जल की शुद्धि घृणित। हिन्दू कागज की शुद्धि को घृणित मानते हैं और योरोपियन जल की शुद्धि को। हम लोग गोबर से घर लीप कर शुद्धि अनुभव करते हैं। किन्तु पाश्चात्य देश वासी मनुष्य की विष्ठा की भांति पशु की विष्ठा को भी गंदी मानते हैं और गोबर से लीपे हुए स्थान को गंदा एवं घृणित समझते हैं। एक कार्य को एक व्यक्ति उचित समझता है, दूसरा अनुचित।

नंगे बदन रहना हमारे यहां त्याग का चिन्ह है किन्तु दूसरे देश वासियों की दृष्टि में वह असभ्यता का चिन्ह है। हिन्दू की दृष्टि में वेद ईश्वरीय संदेश है किन्तु दूसरी जाति के लोग उन्हें एक भजन पूजा की बेढंगी किताब से अधिक कुछ नहीं मानते। विधवा का विवाह हमारे समाज में एक भयंकर बात है पर अन्य जातियों में वह एक बिलकुल साधारण और स्वाभाविक प्रथा है। एक दो नहीं असंख्यों उदाहरण ऐसे मिल सकते हैं, जिनसे यह सिद्ध होता है कि परस्पर विरोधी दो बातों को लोग अपने अपने दृष्टि कोण से बिलकुल सत्य समझते हैं और निष्कपट मन से अपने विश्वासों को ठीक अनुभव करते हैं।

विचारणीय बात यह है कि परस्पर विरोधी दो बातों में से एक सत्य होनी चाहिए दूसरी असत्य। परन्तु फिर भी यह देखा जाता है कि वे दोनों ही बातें अपने अपने क्षेत्र में सत्य समझी जाती हैं। हिन्दू के लिए वेद ईश्वरीय पुस्तक है, पर मुसलमान के लिए ...

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

दूसरा नहीं है। वेद और कुरान में काफी मत भेद है, यदि दोनों ईश्वरके कलाम हैं तो परस्पर विरोधी बातें क्यों ? यदि इन में से एक ईश्वर की वाणी है तो दूसरा असत्य मार्ग पर मानना पड़ेगा। यदि दोनों ही असत्य हैं तो दोनों को भ्रम में पड़ा हुआ मानना पड़ेगा। इस गड़बड़ी का उचित समाधान कुछ नहीं। सत्य क्या है ? यह गुत्थी अभी तक उलझी हुई ही पड़ी है। मनुष्य जिन विचारों और कार्यों को सत्य माने बैठा है उनमें कितना अंश सत्य का है कितना असत्य का, यह अभी निर्णय होना बाकी है। मानव जाति धीरे धीरे आगे बढ़ती जा रही है, एक दिन वह तत्व को खोज ही निकालेगी, ऐसी आशा करनी चाहिए। परन्तु आज यह कहना कठिन है कि जिन बातों को लोग उचित-सत्य-धर्म-माने बैठे हैं वह वास्तव में वैसी हैं या नहीं।

इस गुत्थी का मनोविज्ञान शास्त्र के अनुसार जो विवेचना होती है उसमें विद्वान बेकन के मत की पुष्टि होती है "मनुष्य कोरे कागज के समान है। वह जिन परिस्थितियों के बीच में रहता है, वैसा ही बन जाता है"। एक ही माता पिता से उत्पन्न दो बालकों में से एक हिन्दू को पालन पोषण के लिए दिया जाय और दूसरा अंग्रेज को। तो वे बालक अपने अपने संरक्षकों की भाषा ही बोलेंगे वैसे ही आचार विचारों को अपनावेंगे। अफरीका के जंगल में एक भेड़िया मनुष्य के दो बालक पकड़ ले गया, कुछ ऐसा आश्चर्य हुआ कि उन बच्चों को उसने खाया नहीं वरन् पाल लिया। बड़े होने पर यह बच्चे भेड़ियों की तरह गुर्राते थे, चार पावों से चलते थे और शिकार मार कर कच्चा मांस खाते थे। इन बालकों को शिकारियों ने पकड़ कर वैज्ञानिकों की परीक्षार्थ पेश किया था। इन बातों से जाना है कि मनुष्य सचमुच कोरा कागज है। जिन लोगों के बीच वह रहेगा, उसी प्रकार प्रभाव ग्रहण करेगा और बहुत अंशों में वैसा ही बन जावेगा। उसके विचार और विश्वास भी

संक्षेप में यों कहा जा सकता है कि "संगति" के असर से मनुष्य की जीवन यात्रा आरंभ होती है और इसी के प्रभाव से उस में हेर फेर होता है। विचार बदलते हैं, विश्वास बदलते हैं, कार्य बदलते हैं, स्वभाव बदलते हैं, और उद्देश्य बदलते हैं, वायु के थपेड़ों में उड़ता हुआ सूखा पत्ता इधर से उधर उड़ता फिरता है उसी प्रकार संगति और परिस्थितियों के प्रभाव से मनुष्य की शारीरिक और मानसिक क्रिया पद्धति में होता है और होता रहता है। संगति के असर से लोग कुछ बनते हैं और फिर उसी के प्रभाव से कुछ से कुछ बनजाते हैं। आचार्य फ्रायड का मत है कि "मनुष्य गीली मिट्टी के समान है जो प्रभाव के ढाँचे में ढलता है और ढाला जाता है"। हम देखते हैं कि असंख्य प्रतिभा शाली, सुतीक्ष्ण, मनोभूमि वाले लोग अपनी शक्ति का उपयोग तुच्छ कार्यों में कर रहे हैं, यदि वे शक्तियां किन्हीं महत्व पूर्ण कार्यों में लगती तो अपना और दूसरों का बहुत कुछ भला कर सकती थीं। प्रभाव और परिस्थितियों ने, संगति और शिक्षा ने, उन्हें जिधर लगा दिया उधर वे लग गईं, और लगी रहेंगी। चाहे वह मार्ग उचित हो या अनुचित।

भारतीय धर्माचार्यों ने मानव प्राणी का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण बड़ी गंभीरता एवं तत्परता से किया था। वे इस सत्य को समझते थे कि मनुष्य सिद्धान्त की दृष्टि से कुछ भी क्यों न हो परन्तु व्यवहारतः वह "परिस्थितियों का गुलाम है"। संगति के प्रभाव से वह कुछ का कुछ बनता है और बन सकता है। इस लिए हर व्यक्ति को समय समय पर ऐसी परिस्थितियों और प्रभावों के संपर्क में आते रहना चाहिए जो ऊँचा उठाने वाली हों उत्तम प्रभाव डालने वाली हों, हिन्दू धर्म में तीर्थ यात्रा का महत्व इसी दृष्टि कोण से स्थापित किया गया है। साधारण कामकाजी लोगों की योग्यता, विद्या, साधना सच्चरित्रता और तपस्या ऊँचे दर्जे की नहीं होती।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

अपना कर लोक सेवा, ईश्वर आराधना, स्वाध्याय, और साधना में प्रवृत्त रहे हैं। जहाँ ऐसे महर्षि जल वायु की उत्तमता के कारण, एवं ऐतिहासिक महत्व के कारण, अधिक संख्या में रहते हैं वह स्थान तीर्थ कहे जाते हैं। तीर्थ यात्रा में वायु परिवर्तन होता है, ऐतिहासिक स्मृतियों का अनुभव होता है और उन महर्षियों से सत्संग करने का सौभाग्य प्राप्त होता है जिनमें दूसरों पर अच्छा असर डालने की योग्यता का बाहुल्य होता है। तीर्थ यात्रा में पुण्य फल प्राप्त होता है इसका तात्पर्य यही है कि श्रेष्ठ व्यक्तियों की संगति का उत्तम प्रभाव पड़ता है और उस प्रभाव के कारण अपने अन्दर जो सद्गुण उत्पन्न होते हैं उनके फल स्वरूप सुखदायक आनन्दमयी परिस्थितियाँ होती हैं।

आज तीर्थ स्थानों का वातावरण वैसा नहीं रहा है तो भी वह प्राचीन सिद्धान्त आज भी ज्यों कात्यों बना हुआ है स्थूल शरीर स्वस्थ रखने के लिए आहार की आवश्यकता है इसी प्रकार सूक्ष्म शरीर को, मनोभूमि को, स्वस्थ रखने के लिए सत्संग की आवश्यकता है। स्मरण रखिए मनुष्य कोरे कागज के समान है, गीली मिट्टी के समान है, उस पर संगति का प्रभाव पड़ता है। इस लिए उन्नति शील, आनन्द मय, सतोगुणी प्रभाव अपने ऊपर ग्रहण करने के लिए, सत्संग का अवसर तलाश करते रहना चाहिए और जब भी मौका प्राप्त हो उससे लाभ उठाना चाहिए।

कथा प्रसिद्ध है कि एक बार विश्वामित्र ने वशिष्ठ को अपनी हजार वर्षों की तपस्या दान दो, बदले में वशिष्ठ ने एक क्षण के सत्संग का फल विश्वामित्र को दिया। विश्वामित्र ने इसे अपना अपमान समझा। उन्होंने पूछा कि मेरे इतने बड़े दान का बदला आपने इतना कम क्यों दिया? वशिष्ठजी विश्वामित्र को शेषजी के पास फैसला कराने ले गए। शेषजी ने कहा — मैं पृथ्वी का भार उठाए हूँ। तुम दोनों अपनी अपनी वस्तु के बल से मेरे इस बोझ को अपने ऊपर ले लो। हजार वर्ष के तपोबल की शक्ति से वशिष्ठ पृथ्वी का बोझ न उठा सके, किन्तु क्षणभर के सत्संग के बल से विश्वामित्र ने पृथ्वी को उठा लिया। तब शेषजी ने फैसला किया कि हजार वर्ष की तपस्या से क्षण भर के सत्संग का फल अधिक है।

अच्छे व्यक्तियों की संगति करने के लिए कुछ अन्य कार्य हर्ज करने पड़े, पैसा खर्च करना पड़े तो करना चाहिए क्योंकि यह हानि बीज रूप है जो अन्त में हजार गुनी होकर लौटती है। जो अपने जीवन को उच्च बनाना चाहते हैं उन्हें चाहिए कि स्वाध्याय के लिए कुछ समय नित्य निकालें, श्रेष्ठ पुरुषों की उत्तम रचनायें जो ऊँचा उठाने वाली हों, नित्य पढ़ें। स्वाध्याय करना घर बैठे सत्संग करना है। इसके अतिरिक्त उत्तम विचारवान्, श्रेष्ठ पुरुषों के पास बैठने, उनसे प्रश्न पूछने, उनके आदर्शों और स्वभावों का अनुकरण करने का प्रयत्न करते रहना चाहिए। लोहे को सोना बना देने की शक्ति पारस पत्थर में होती है। और पशु को मनुष्य बना देने की क्षमता सत्संग में पाई जाती है। पारस पत्थर अप्राप्य है पर सत्संग की इच्छा करें तो उसे अपने समीप ही प्राप्त कर सकते हैं।

ध्यान रखना चाहिए कि हमारे आस पास बुरा प्रभाव डालने वाला वातावरण तो नहीं है, यदि हो तो उससे सावधान रहने और बचते रहना चाहिए। स्मरण रखना चाहिए कि जीवन को ऊँचा उठाने की शक्ति सत्संग में है अतएव इसके लिए सदैव प्रयत्न शील रहना चाहिए। विद्वान् बेकन का कथन ठीक है कि मनुष्य कोरे कागज के समान है। पतन और उन्नति बहुत कर निकटस्थ प्रभाव के ऊपर निर्भर है इसलिए अपने को बुरे भावों से बचाने और अच्छे प्रभावों की छाया में लाने का सदैव प्रयत्न करते

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

दूसरों को प्रभावित करना

दूसरों को प्रभावित करने का कार्य केवल जबानी जमा खर्च से नहीं हो जाता। उस के लिए कुछ ठोस तत्व पैदा करना पड़ता है जिस के आधार पर दूसरों को प्रभावित किया जा सके। इसे मानसिक आकर्षण कह सकते हैं। अपने अन्दर मानसिक आकर्षण उत्पन्न करने के लिए पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक डाक्टरों ने सात बातें निर्धारित की हैं जिनके द्वारा अपने अन्दर ऐसी शक्ति पैदा की जा सकती है जिस के बल पर अन्य व्यक्तियों को प्रभावित किया जा सके। (१) Privacy निजूपन (२) Secrecy–गुप्त मार्मिक पन (३) Mystery–भेदीपन (४) Modration–मध्यमपन (५) concentration–एकाग्रपन (६) Suggestiveness–सूचना पूर्वक (७) Fixed Gaze–एकाग्र दृष्टि। नीचे इनका स्पष्टीकरण किया जाता है

निजूपन–अपने लिए सदैव ऊँचे विचार रखो। अपने से अधिक बल, पद, धन, या ज्ञान के किसी व्यक्ति को देखो तो अपने अन्दर हीनता के विचार मत लाओ। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि उन का उचित आदर मत करो या अपना व्यवहार उद्धत बनालो। नम्रता और सम्मानसहित का व्यवहार मनुष्य के आवश्यक गुण हैं परन्तु अपनी योग्यता को तुच्छ और हीन समझ कर अपने को नाचीज मान लेना बहुत बुरा है। अपने को ईश्वर का राजकुमार और सर्व गुण सम्पन्न अमर आत्मा समझो किसी के सामने न तो झेंपो और न गिड़ गिड़ाओ। स्वयं अपना सम्मान करो। आत्माभिमान को धारण करो, अपने व्यक्तित्व को ऊँचा समझो और निडरता पूर्वक बातचीत करो।

गुप्त मार्मिक पन–अपने इरादों को छिपा कर रखो। तुम अन्त में क्या करना चाहते हो यह किसी को मत बताओ। जो लोग अपने मन के सारे भेद बताते फिरते हैं उनकी बात का महत्व कम हो जाता है और छिछोरों में गणना होने लगती है। किसी को प्रभावित तो तुम्हें दूसरे के विचार परिवर्तन के लिए ही करना है ऐसी दशा में अपना असली इरादा उस पर कदापि प्रकट मत होने दो। इससे उसकी दूषित वृत्तियां सजग हो जाएँगी और अपने बचाव का प्रयत्न करेंगी। दूसरे की बातों को पूरी तरह सुनो किन्तु अपनी बातें उतनी ही कहो जितनी कहना जरूरी है। जो लोग कम बोलते हैं, सार गर्भित बोलते हैं, आवश्यकीय वार्तालाप करते हैं, उनकी गंभीरता बनी रहती है और उसका दूसरों पर बहुत प्रभाव पड़ता है।

भेदीपन–दूसरों के बारे में अधिक से अधिक जानो। जिस आदमी से व्यवहार करना है उस की वर्तमान दशा, पूर्व जीवन, गुप्त बातें, मानसिक दशा, इच्छाएं, स्थिति आदि के संबंध में जितनी ज्यादा जान कारी प्राप्त कर सको, करो। जब तक किसी आदमी की स्थिति के संबंध में अधिक जान कारी प्राप्त न हो तब तक उसे पूरी तरह प्रभावित करने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है किन्तु साथ ही इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि अपने भेद खास तौर से अपनी कमजोरियों के भेद ऐसी बुरी तरह किसी पर प्रगट न होने पावें जिससे तुम घृणा के पात्र बन जाओ।

मध्यमपन–अपने को बीच की स्थिति में रखो। न तो सिद्ध पुरुष बनो और न नीच होने की घोषणा करो। अपनी बल बुद्धि, विद्या की न तो शेखी मारो और न तुच्छता प्रकट करो। साधारणतः न तो इतना प्रेम प्रकट करो कि उसके गले से ही लिपट जाओ और न द्वेष, कटुता या रुखाई का ही व्यवहार करो। वस्त्र के बारे में भी यही नीति रहनी चाहिए। इतने बढ़िया और अटपटे वस्त्र नहीं होने चाहिए कि नाटक के पात्रों की सी शकल बन जाय और न फटी

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

कपड़े पहनो। मध्यम श्रेणी के भले आदमियों की तरह अपनी रहन सहन चाल ढाल बनाओ।

एकाग्रमन—जिस बात को सोचो, जिस चीज को हाथ में लो, जिस काम को आरंभ करो उस पर मन को पूरी तरह एकाग्र करलो। उसके विषय में अच्छी तरह सोच बिचार करो। सफलता प्राप्त करने के लिए जो जो उपाय समझ में आते हैं उन सब को कसौटी पर कसो और यदि कोई उपयुक्त प्रतीत हो तो काम में लाओ। जो काम हाथ में लिया है उसे पूरा होने तक, अनिच्छा या उदासी मत लाओ। काम करते समय ऐसा न हो कि शरीर उसमें लग रहा हो और मन दूसरी जगह कुलाचें खारहा हो। एकाग्रता के साथ काम करने पर कठिन काम सफल हो जाते हैं।

सूचना पूर्वक—साधारण बात चीत और सूचना पूर्वक बातचीत करने में यह अन्तर है कि मामूली बोलचाल मनोरंजन के लिए होती है या जब जैसी इच्छा उठी वैसी ही बात करने लगते हैं किन्तु सूचना पूर्वक बात चीत किसी खास उद्देश्य को पूरा करने लिए के अपनी इच्छा शक्ति को सम्मिलित करके कही जाती है। मामूली तरह कोई बात कहदेने और जोर देकर अपनी बात पर पूरे बिश्वास की भावना के साथ- मध्यम और गंभीर वाणी में कहने के परिणाम में अद्भुत अन्तर होता है। हलके तरीके से कुछ कह सुन देने की अपेक्षा अपनी सारी इच्छा को शामिल करते हुए भले मानसों की तरह जो बात कही जाती है वह सुनने वाले के हृदय में बहुत गहरी घुस जाती है और देरतक ठहरने वाला एवं गहरा असर करती है।

एकाग्र दृष्टि—मनुष्य के शरीर में नेत्र ही ऐसे अद्भुत दर्पण हैं। जिस में होकर उस का सारा अन्तस्थल झलकता है। चोर, लम्पट, क्रूर मूर्ख या नचाने, जल्दी जल्दी पलक पीटने, या छछोरे पन की सी आंखें बनाये रखने पर हर कोई ताड़ सकता है कि आदमी तुच्छ है। इस लिए अपनी मुख मुद्रा गंभीर रखो। आम लोगों के सामने ठठाकर मत हँसो। जहां प्रसन्नता की जरूरत हो थोड़ा सा मुसकरा देना काफी है। आंखों में आत्म विश्वास, गंभीरता और उच्च व्यक्तित्व की झलक होनी चाहिए। जिस आदमी से बात कर रहे हो आरंभ में उसकी निगाह से निगाह मिलाओ कुछ ही देर में वह अपनी आखें झुकालेगा। परन्तु यह दृष्टिपात ऐसा न होना चाहिए जो असभ्यता सूचक प्रतीत हो। अपनी दृष्टि उस की नाक के अग्रभाग पर जमाये रहो और कभी कभी चहरे के इधर उधर देखो। इस प्रकार कुछ देर चहरे पर दृष्टि जमाये रहने से उसे आसानी से प्रभावित किया जा सकता है।

योग शास्त्र में एकाग्रता को बहुत बड़ा महत्व दिया गया है क्योंकि मनुष्य की शक्तियाँ अलग अलग कार्यों में लगी रहने के कारण कोई विशेष असर नहीं होता किन्तु उन्हें यदि एक ही बात पर केन्द्री भूत कर दिया जाय तो अलग अलग दिशाओं में काम करने वाली शक्तियाँ एकत्रित होकर एक विचित्र बल धारण कर लेती है। दूसरों को प्रभावित करने के इच्छुकों को तो खास तौर से अपनी एकाग्रता बढ़ानी चाहिए। शारीरिक शक्तियों को एकाग्र करने के लिए तीन साधन आवश्यक हैं। (१) शरीर की हलचलों को एकाग्रकरना (२) विचारों पर काबू करना (३) किसी वस्तु पर ध्यान एकत्रित करना।

(१) शरीर की एकाग्रता का अभ्यास करने के लिए किसी ऐसे एकान्त स्थान में नित्य जाना चाहिए जहाँ बहुत से दृश्यों और शोर गुलों की बाधा न हो। इस साफ सुथरे स्थान में शरीर को ढीला छोड़ने के लिए किसी आसन या आराम कुर्सी पर बैठो। शरीर को रुई के गद्दे की तरह बिलकुल ढीला छोड़दो। बैठने लेटने और पड़ रहने में जैसे

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

स्थित हो जाओ दाहिने हाथ का अगूँठा कुछ आगे की ओर बढ़ा कर रखो और उस के नाखून पर ध्यान जमाओ। भावना करो कि मेरे शरीर में यह अँगूठा ही एक अंग है और बाकी अंगों से कोई संबंध नहीं। शेष अंगों को ध्यान में मन में मत आने दो और और केवल अगूठे के नाखून को देखो और उसी पर चित्त स्थित करो। ऐसा करने से शरीर के विभिन्न स्थानों पर काम करने वाली शक्तियां कुछ ही देर में एकत्रित हो जायगी और अगूठे में गर्मी, सनसनाहट, खुजली फड़कन या जलन सी मालूम होने लगेगी। बस, पहले दिन का अभ्यास, यहीं बन्द कर दो। क्योंकि शक्तियों को यकायक एक स्थान पर अधिक देर तक एकत्रित करने से उस स्थान को तथा शरीर के अन्य अवयवों को झटका लगने के कारण कुछ विकार पैदा होने की संभावना रहती है। पहले दिन जितनी देर में गर्मी मालूम हुई थी उस से एक एक मिनट आगे बढ़ते चलो। कई बार अधूरे मन या अस्थित चित्त से अभ्यास करने पर अगूठे में शक्ति प्रवाह देर से आता है ऐसी दशा में प्रारंभिक अभ्यास का समय वह मानना चाहिए जिस में सनसनाहट पैदा हो उससे आगे के समय में आधी आधी मिनट प्रतिदिन वृद्धि करनी चाहिए। कई बार जब चित्त बहुत डांवाडोल होता है तो आरंभिक गर्मी लाने में भी बहुत समय लग जाता है और मन उचटने लगता है। यदि पन्द्रह मिनट में भी शक्ति प्रवाह संचालित न हो तो उस समय को अभ्यास स्थगित करके फिर किसी समय करना चाहिए। आरंभिक शक्ति प्रवाह जारी होने के चार पाँच मिनट बाद अगूठे के रंग बदलते हुए मालूम देते हैं कभी वह पीले, कभी नीले, कभी गुलाबी, और कभी कई रंगों से मिश्रित मालूम पड़ने लगता है। यह अवस्था बताती है कि अभ्यास बढ़ रहा है। प्रवाह जारी होने के बाद अधिक से अधिक बीस पच्चीस मिनट तक धीरे धीरे अभ्यास बढ़ाया जा सकता है। प्रति दिन एक मिनट से ---- ---- इस प्रकार जब अभ्यास सफलता के निकट पहुंच जाता है तो नाखून गहरे लाल या नारंगी रंग का आग के जलते हुए गोले की तरह दिखाई देने लगता है। बस इससे आगे मत बढ़ो। अभ्यास पर से उठ कर अगूठे को खुली हवा में थोड़ी देर पड़ा रहने दो। इस के उपरान्त कच्चे दूध में उसे दो तीन मिनट पड़ा रहने दो। दूध न मिल सके तो पानी से काम निकाला जा सकता है। इस दूध या पानी को कहीं जमीन में गाड़ देना चाहिए जिससे कोई उसे छुए न। यह एक प्रकार का विष होगा जिसके स्पर्श ने रोग उत्पन्न हो सकते हैं। अगूठे को शीतल करना भूलना न चाहिए अन्यथा वह विष रुक कर कोई उत्पात खड़ा कर सकता है। यह अभ्यास करने के लिए प्रातः काल का समय उत्तम है।

दैनिक व्यवसाय में भी शरीर की एकाग्रता बनाये रखने का प्रयत्न करना चाहिए।

जिसकी आत्मा शान्त है। जो बुद्धिशाली है जिसके हृदय में नम्रता है वही उन्नति प्राप्त है।

× × × ×

परिश्रम ही जीवन का जीवन है और सुस्ती ही बीमारी है। शरीर के हर एक हिस्से का जीवन इसी में है कि वह अपने कार्य की पूर्ति करता रहे।

× × × ×

क्रोध से अविचार, अविचार से भ्रम, भ्रम से बुद्धि का नाश, और बुद्धि का नाश होजाने से सर्वनाश हो जाता है।

× × × ×

जिसके पास धन नहीं है वह ग़रीब नहीं कहा जा सकता है। जिसकी तृष्णा बढ़ी हुई है वह ग़रीब है।

× × × ×

स्त्रियों की भूल व्यभिचार है। दानी की भूल लोभ है। इस लोक तथा पर लोक की भूल पाप करना है इन सब भूलों से बुरी भूल अविद्या है।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

योगावस्था सदा नहीं रहती

(महात्मा योगानंद जी महाराज)

भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन से अपने पूर्ण ब्रह्म होने का पूरा परिचित देकर भी कहा था कि शरीर धारी अवतारी पुरुष भी सर्वदा काल पूर्ण ब्रह्म भाव में नहीं रहते, जब महाभारत का युद्ध समाप्त हो गया और महाराज युधिष्ठिर को राज्याभिषेक हो गया तब भगवान श्री कृष्ण अर्जुन से कहने लगे कि कहो अर्जुन और कोई बात बाकी है ? तब अर्जुन ने कहा कि भगवान् आपके अनुग्रह से हम युद्ध जय कर सके हैं और हमारा राज्य हमें पूर्व वत् प्राप्त हो गया है, यह तो व्यवहार है, परन्तु हे केशव ! आपने कृपा करके युद्ध क्षेत्र में मुझे गीता का ज्ञान कहा था वह चित्त की व्यग्रता के कारण मेरा सब नष्ट हो गया है, अतएव कृपया वह पुनः कहिए, तब श्री कृष्ण भगवान बोले कि हे अर्जुन ! तुमने बड़ी भूल की जो उस ज्ञान को अच्छी तरह याद न रख सके, वह परम सनातन गुह्य ज्ञान मैंने उस समय योगाबलम्बन करके तुम को दिया था, ऐसा उस समय कहा हुआ दिव्य ज्ञान अब मैं नहीं कह सकूँगा, वह आज स्मरण मुझे नहीं है इस लिए वह सब तो कहा नहीं जा सकता तथा अब भी जो मैं कहूँगा उसी से भी तुम्हारा मंगल होगा। उस के बाद भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन के प्रति अनुगीता कही है।

इस लिए इससे तुम को समझ लेना चाहिए कि अवतारी पुरुष भी अष्ट प्रहर योग में संलग्न नहीं रहते। इसी तरह तुम भी सब काल ब्रह्म में निमग्न नहीं हो सकते। जब तक शरीर के साथ तुम्हारा संबंध है तब तक आवश्यकतानुसार सभी कर्म करने पड़ेंगे।

प्रातः काल उठिये।

(महात्मा जेम्स ऐलान।)

आध्यात्मिक जागृति का होना शारीरिक शक्तियों की जागृति का होना है। आलसी तथा विषयासक्त मनुष्य कभी सत्य का ज्ञान नहीं प्राप्त कर सकता। जो मनुष्य स्वास्थ्य और शक्ति के अमूल्य समय को-ब्रह्म मुहूर्त को-शय्या पर पड़ा पड़ा खो देता है वह स्वर्गीय सुख को प्राप्ति के लिए नितान्त अयोग्य है।

वह मनुष्य जिसकी बुद्धि जागृत होने लग गई है, जिसको उच्च संभावनाओं का ज्ञान होने लग गया है और जिसने जगत् को परिवेष्ठित करने वाले अन्धकार को भगाना आरंभ कर दिया है। तारागणों के छिपने से पूर्व ही उठ बैठता है और पवित्र भावनाओं के सहारे अन्तः करण के अन्धकार को भगाते हुए सत्य के प्रकाश को प्राप्त करने लिए यत्न करना उसका प्रथम कर्तव्य होता है, इसके विपरीत इस प्रभात समय में सोने वाले तामसिक अन्धकार में डूबे रहते हैं।

जिन बड़े अधिकारों तथा उच्च स्थानों को महान पुरुषों ने प्राप्त कर उनका उपयोग किया है, वे केवल छलांग मारकर एकाएक इतने ऊँचे नहीं पहुँचे थे, बल्कि जब उनके साथी सोया करते थे तब वे जागकर उन्नति के लिए परिश्रम किया करते थे।

आज तक कोई ऐसा पवित्रात्मा साधु या सत्य प्रचारक नहीं हुआ है जो प्रातः उठता न रहा हो, ईसा मसीह को सवेरे उठने का अभ्यास था और वह प्रभात में ही ऊंचे एकान्त पहाड़ों पर चढ़कर पवित्र भावनाओं पर ध्यान लगाते थे। बुद्ध भगवान एक घंटा तड़के उठ कर ध्यानस्थ हो जाते थे उनके तमाम शिष्यों को ऐसा ही करने की आज्ञा थी।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

सांस लेने की विधि व्यवस्था।

हमारे शरीर को नित्य जिनपदार्थों की आवश्यकता होती है उनका बहुत बड़ा भाग वायु द्वारा पूरा होता है। अन्न जल द्वारा ही सब वस्तुएं प्राप्त हो जाती हों सो बात नहीं है, यद्यपि शरीर की आवश्यक वस्तुओं का एक बड़ा भाग अन्दर पहुंचता है पर सबसे बड़े भाग की पूर्ति नासिका के मार्ग से ही होती है। हिलने जुलने की प्रतिक्रिया को ही वायु नहीं समझना चाहिए। वास्तव में वायु एक लोक है जिसमें सृष्टि के सम्पूर्ण दृश्य पदार्थ सूक्ष्म रूप से भरे रहते हैं और भ्रमण करते रहते हैं। पौदे बढ़ते हैं और भूमि में वह पदार्थ न होने पर भी अपने उपयोगी तत्व स्वयमेव बढ़ाते हैं। एक खेत में कई वर्ष तक लगातार ईख बोई जाय तो उस खेत में इतनी शकर पैदा होजायगी जितनी कि इस खेत के परमाणुओं में कदापि नहीं पाई जा सकती। निश्चय ही ईख के पौदे शकर की इतनी बड़ी मात्रा जमीन से नहीं वरन् हवा से खीचते हैं। हम आँखों से भले ही न देख सकें पर भोजन की बहुत बड़ी मात्रा वायु से लेते हैं।

एक मनुष्य को यदि बढ़िया बढ़िया भोजन कराये जांय, किन्तु खराब हवा में रखा जाय तो वह दुर्बल और बीमार हो जायगा। इसका तात्पर्य यह है कि वायु द्वारा जो खुराक मिलनी चाहिए थी वह उसे नहीं मिली। हममें से हर एक व्यक्ति जो स्वस्थ रहने का इच्छुक है उसे चाहिए कि स्वच्छ वायु सेवन करने का पूरा पूरा ध्यान रखे। हमारा शरीर वायु में से निरंतर ऐसे पदार्थ खींचता रहता है जो पाचन शक्तिको ठीक रखें और स्फूर्ति प्रदान करें। यदि आप स्वच्छ वायु सेवन करने के संबंध में लापरवाही करते हैं तो स्पष्ट ही यह पाचन शक्ति

जहाँ आप रहें, काम करें और सोवें वह स्थान खुले हुए होने चाहिए। आर पार हवा जाने के लिए खिड़की और दरवाजों की समुचित व्यवस्था हो, कूड़ा कचार गंदगी और हानिकर वस्तुओं का आस पास जमाव न होना चाहिए जिनके संसर्ग से हवा विषैली होजाय और स्वास्थ्य पर विषैला प्रभाव पड़े।

गहरी सांस लेना इसलिए आवश्यक है कि हवा शरीर के छोटे छोटे हिस्सों तक में पहुंच जाय, फेफड़ों को पूरी कसरत करनी पड़े और रक्त का दौरा ठीक रहे। जो लोग गरदन झुकाये आलस में पड़े रहते हैं और अधूरी एवं जल्दी जल्दी सांस लेते हैं उनके श्वांस यन्त्र का कुछ भाग तो आवश्यकता से अधिक परिश्रम करता है,किन्तु अधिकांश अंगों में वायु का पूरा प्रवेश नहीं हो पाता और वे उस लाभ से वंचित रह जाते हैं। नाड़ियों में उत्पन्न हुए विष का अच्छी तरह शोधन नहीं हो पाता और जहां तहां बीमारियों के केन्द्र जमा होने लगते हैं।

यह बात ध्यान में रखना आवश्यक है कि सदैव मेरुदंड सीधा रहे, सीना उठा हुआ हो और गरदन ऊँची रहे। क्योंकि झुक कर बैठने और चलने से अगले भाग पीछे की ओर धँसकते हैं और पिछले भाग आगे की ओर तनते हैं इससे पेट और फेफड़ों पर एक प्रकार का दबाव पड़ता है और उस दबाव के कारण श्वांस प्रश्वास क्रिया में बाधा पहुंचती है। इसलिए सदैव सीधे बैठने और सीधे खड़े होने एवं चलने फिरने का सदैव ध्यान रखना चाहिए वायु को समस्त शरीर में निर्बाध रूप से फैलने देने के लिए यह एक बहुत ही आवश्यक बात है।

मुँह को बंद रखिए और नाक से हवा लीजिए। परमात्मा ने सांस लेने के लिए ही नासिका बनाई

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

गुबार को छानती है। इसके बाद फेफड़े तक पहुँचने में हवा को जो मंजिल तय करनी पड़ती है उसमें उसका ताप मान ऐसा हो जाता है जिससे फेफड़ों को किसी प्रकार की हानि न पहुंचे। मुँह में ऐसी सुविधा नहीं है, मुँह द्वारा ली हुई हवा एक साथ बहुत अधिक, बिना छनी और सर्द गर्म होती है जिससे फेफड़े पर आघात पहुंचता है और हानि की संभावना रहती है।

शरीर को जिन वस्तुओं की आवश्यकता है उनका चार बटा पांच भाग वायु द्वारा प्राप्त होता है इसलिए हर व्यक्ति को स्वास्थ्यप्रद वायु सेवन के लिए सदैव प्रयत्न शील रहना चाहिए। प्रातःकाल वायु सेवन के लिए जरा जरा जल्दी जल्दी कदम उठाते हुए कई मील टहलने जाना एक अच्छा व्यायाम है। जिसका असर चहरे पर तेज के रूप में बहुत जल्द देखा जा सकता है।

प्रसन्न रहना ही उत्तम धर्म तथा कर्त्तव्य है। यदि हम स्वयं प्रसन्न रहते हैं तो अत्यन्त परोपकारी हैं।

× × ×

हँसी वह तेल है जिसके बिना जीवन रूपी यन्त्र बिगड़ जाता है।

× × ×

मनुष्य जितना अपनी आत्मा की तरफ ध्यान नहीं देता उतना ही दूसरे की निन्दा में चित्त लगाता है।

× × ×

अज्ञान मनुष्य का सबसे बड़ा दुश्मन है।

× × × ×

जिसके पास किसी का कर्ज नहीं वह बड़ा मालदार है।

सच्चा कर्मवीर।

(डाक्टर श्याम मनोहर अग्निहोत्री, बीघापुर)

"योग कर्मस्तु कौशलम्" गीता में भगवान कृष्ण ने अर्जुन को आदेश दिया है कि तुम कर्म-कुशल योगी बनो। लौकिक और पारलौकिक कार्यों में तुम अपना उचित स्थान प्राप्त करते हुए सफलता प्राप्त करो और निरंतर विकाश की ओर बढ़ते चलो। एक सच्चे कर्मवीर का यही लक्ष और यही उद्देश होना चाहिए।

योग शास्त्र सिखलाता है कि मानव पुरुषार्थ यह है कि जीव को तब तक साधना करनी चाहिए जब तक वह आत्मा से एक न हो जाय। चूंकि आत्मा ही मनुष्य में ईश्वरीय अंश है इसलिए इस एकता का अंतिम परिणाम "परमेश्वर के साथ एकता" होता। ईश्वर परायण मनुष्य को आत्मज्ञान हो जाता है। आत्मज्ञान विश्वासी मनुष्य को स्वतंत्र, बीर, अमर और आत्मा विश्वासी बना देता है। सच्चे अभिमान के प्रकाश में मनुष्य वास्तविक मनुष्यत्व प्राप्त करता है वह अपने व्यक्तित्व को दृढ़ बना लेता है उसकी शक्ति को सभी मनुष्य स्वीकार करते हैं, जिसके सम्पर्क में वह आता रहता है वह भी उसीके सदृश हो जाता है। ऐसी स्थिति में पहुंचा हुआ मनुष्य सच्चा कर्मवीर बन सकता है। सच्चा कर्मवीर संसार में अपने प्रत्येक कर्तव्य का दृढ़ता पूर्वक पालन करता है वह जीवन के खेल में ही आनन्द मानता है न कि उसके प्रतिफल में। वह खेल को खेलता है अच्छी तरह खेलता है, मजे से खेलता है। गीता में भगवान ने इसी प्रकार कर्म करने को बतलाया है सच्चा कर्म योगी बनने के लिए हमें इसी मार्ग का अवलम्बन करना चाहिये।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

धर्म का सार ।

(श्री० सत्यदेव राव, अजमेर)

महाभारत में एक प्रसंग है कि धर्मराज युधिष्ठिर अपने भाइयों सहित भीष्म पितामह के पास धर्म का तत्व जानने के लिए गए। उन्होंने पितामह से पूछा कि भगवन्! धर्म की बहुत उलझी हुई और परस्पर विरोधी विवेचनाऐं शास्त्रों में प्राप्त होती हैं। हम लोग संक्षेप में धर्म का तत्व जानना चाहते हैं सो आप कृपा पूर्वक हमें बताइए। भीष्मजी ने कहा—

श्रूयता धर्म सर्वस्वं, श्रुत्वा चैवावधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूला निपरेषां न समाचरेत्॥

हे युधिष्ठिर! धर्म का सार सुनो और सुनकर उसे हृदय में धारण करो—"जो अपने को बुरा लगे उसे दूसरों के साथ व्यवहार न करे।"

कैसी सुन्दर उक्ति है। कितना अनमोल उपदेश है। अपने लिए जैसे व्यवहार की हम आशा करते हैं वैसा ही दूसरों से करें, जो बात अपने लिए बुरी समझते हैं उसे दूसरों के साथ न करें यही धर्म का सार है। पुण्य पाप की, धर्म अधर्म की सारी गुत्थियां इस छोटे से सूत्रने सुलझादी हैं। इस कसौटी पर कसने के उपरान्त हर एक कार्यके बारे में यह जाना जा सकता है कि क्या पुण्य है? क्या पाप? क्या धर्म? क्या अधर्म? क्या करना चाहिए? क्या न करना चाहिए?

मनुष्य चाहता है कि दूसरे लोग उसके साथ अलमनसाहत का वर्ताव करें, शिष्टाचार और सभ्यता के साथ पेश आवें, मीठा बोलें, सहायता करें, वचन का पालन करें, यथार्थ बात कहें, निष्कपट रहें, ईमानदारी दिखावें, प्रेम संबंध रखें, न्याय बुद्धि से काम लें। जो व्यक्ति इन शर्तों का पालन करता है वह प्रिय लगता है, उसको अच्छा समझते हैं, धर्मात्मा का यही चिन्ह है। मानव जाति की इन स्वाभाविक आकांक्षाओं की जो कोई भी पूर्ति करता

मनुष्य चाहता है कि दूसरे लोग उसके साथ दुर्व्यवहार न करें, कुछ वस्तु न चुरावें, मारें न, कडुआ न बोलें, अपमानित न करें, धोखा न दें, निन्दा या चुगली न करें, सतावें न, अन्याय न करें, निष्ठुरता धारण न करें, क्रूरता न दर्शावें, जो व्यक्ति इन्हीं आचरणों को करता है वह बुरा लगता है, उसे घृणा करते हैं और दुष्ट बताते हैं। यही पाप का चिन्ह है। मनुष्य को आमतौर से जो व्यवहार ना पसंद हैं वे पाप है। जो इन पाप कर्मों को करता है वह पापी है।

नाना प्रकार के मत, मतान्तरों, सम्प्रदायों, के उलझन भरे कर्मकाण्डों के जंजाल में भटकते रहने से धर्म तत्व की प्राप्ति नहीं हो सकती। जो धर्म की प्राप्ति करना चाहते हैं, सच्चे अर्थों में धर्मात्मा बनना चाहते हैं इन्हें चाहिए कि अपनी इच्छा, रुचि और आदतों की कड़ी समालोचना करके देखें कि इनमें कितने अंश ऐसे हैं जो दूसरों के उचित अधिकारों से टकराते हैं। अपनी स्वार्थपरता, अनुदारता, संग्रह शीलता और भोगेच्छा को घटाना चाहिए और दया, उदारता परमार्थ, प्रेम सेवा, सहायता, त्याग, सात्विकी प्रवृत्तियों को बढ़ाना चाहिए। स्वार्थ की मात्रा जितनी घटती जाती है और परमार्थ की मात्रा जितनी बढ़ती जाती है उतना मनुष्य धर्मात्मा, पुण्यात्मा बनता जाता है। इसी मार्ग पर चलता हुआ पुरुष स्वर्ग या मुक्ति प्राप्तकर सकता है।

संसार के सारे दुखों, क्लेशों, संघर्षों का एक मात्र कारण यह है कि लोग अपने लिए जो बातें चाहते हैं वह दूसरोंके लिए व्यवहार नहीं करते। खरीदने के बाँट और रखना चाहते हैं तथा बेचने के और। यह घातक नीति ही अशान्ति की जड़ है। स्वार्थ का निकृष्ट इच्छा से अन्धे होकर जब हम अपने लिए बहुत अच्छा वर्ताव चाहते हैं और दूसरों के साथ बहुत बुरा व्यवहार करते हैं, तो उसका

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

शिक्षा का क्या करें ?

(पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय एम. ए.)

शिक्षा के विषय में आजकल बहुत ऊहापोह हो रही है। कुछ लोग शिक्षा के सांस्कृतिक उद्देश्य पर बल देते हैं। कुछ उसको औद्योगिक रूप देना चाहते हैं। परन्तु हैं यह सब गर्म दल वाले एकान्तिक और एकांगी। वह भूल जाते हैं कि शिक्षा 'पूर्ण मनुष्य' बनाने के लिये है। 'पूर्ण मनुष्य' न तो माँस हाड़ का का पुञ्ज है न शरीर रहित जीव है। 'पूर्ण मनुष्य' में तो हाड़ मांस से लेकर अहङ्कार युक्त आत्मा तक सभी सम्मिलित हैं। जो शिक्षा रोटी के प्रश्न तक ही सीमित रहती है वह भी न केवल अधूरी किन्तु भयानक है। आधुनिक पाश्चात्य भाषा का प्रयोग किया जाय तो हम कह सकते हैं कि मनुष्य में स्थूल शरीर है, फिर इस के पश्चात् नर्वस सिस्टिम या वात संस्थान है। फिर इस के पश्चात् मस्तिष्क या ब्रेन है। इसके पीछे मन या माइंड है। मस्तिष्क और माइंड के बीच में कोई बड़ी दीवार नहीं है। अतः जो शिक्षा हड्डियों और मांस-पिंडों का विकास तो करती है परन्तु नर्वस सिस्टिम या मस्तिष्क के विकास पर बल नहीं देती वह अधूरी क्या निरर्थक है। पाश्चात्य शिक्षा माइंड तक समाप्त हो जाती है। वे आगे बढ़ना नहीं चाहते। यही उनकी अंतिम मंजिल है। इस मनोवृत्ति ने पाश्चात्य देशों की उन्नति को एक विचित्र अधूरा रंग दे रक्खा है और संसार का वर्तमान अशान्ति-पूर्ण वातावरण उसी का फल स्वरूप है। वे शरीर को पालने समय शरीरी को भूल जाते हैं। उनको देशों को बचाने की चिन्ता है देश वासियों को बचाने की नहीं। कारखानों की अधिक परवाह है कारखानों वालों की नहीं। यंत्रों की अधिक चिन्ता है यंत्रियों की नहीं। इसी को तो भौतिक दृष्टि से सैंतालीस वर्ष पूर्व ड्रमंड ने क्या ही अच्छा कहा था:—

"भौतिकवादियों का एक मात्र दोष यह है कि उन्होंने संसार को परमाणु की दृष्टि से देखा है। जो मशीन इस विशाल जगत् को चला रही है उस का उन्होंने केवल मशीन के रूप में अवलोकन किया है। वे भूल जाते हैं कि जहाज में कोई यात्री भी हैं। या यात्रियों में कोई कप्तान भी है और उस कप्तान के सामने एक उद्देश्य भी है"।

वैदिक भाषा में हम मनुष्य को अन्नमय कोष, प्राणमय कोष, और आनन्दमय कोष का एक संमिश्रित पञ्ज कह सकते हैं। इसलिये वैदिक शिक्षा का आरम्भ अन्नमय कोष से होकर आनन्दमय कोष पर उसका अन्त होता है। हम रोटी को भूलते नहीं परन्तु उसको किसी बड़े उद्देश्य का साधन मानते हैं। जो साधन साध्य की प्राप्ति नहीं कराता वह दूषित और त्यक्तव्य साधन है। उस मार्ग से क्या लाभ जो निर्दिष्ट स्थान पर पहुंचा न सके ? जो लोग रोटी के खाने वाले आत्मा की अवहेलना करते हैं उनको याद रखना चाहिये कि रोटी केवल खाई नहीं जाती, वह खाने वाले को भी खा जाती है। इसी लिये तो भर्तृहरि ने कहा था:—भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ताः। "हमने रोटी नहीं खाई। रोटी ने हमको खा लिया"।

आज पाश्चात्य देशों की ओर गम्भीर दृष्टि डालो। वहाँ रोटी पर इतना बल दिया जारहा है कि रोटी देशों को खाये जा रही है। हमारे देश में भी रोटी ने हमको खाना आरम्भ कर दिया है। हम ने लोगों में रोटी की दुहाई देकर उन पाशविक प्रवृत्तियों को उत्तेजित कर दिया है जिन के कारण न रोटी वालों को चैन है न बिना रोटी वालों को। शिक्षा-विशारदों को इस बात पर अवश्य ही विचारना चाहिये। ऐसा न हो कि रोग-नाश के उपाय रोगी का भी नाश कर दें।

परन्तु सांस्कृतिक शिक्षा के गर्म दल वालों को

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

दूसरों की सहायता भी कीजिए

(श्री० मंगलचन्द भण्डारी, अजमेर)

आपके पास रुपया, पैसा, जमीन, जायदाद, विद्या, बुद्धि, रूप, अनुभव आदि अनेक सम्पत्तियाँ हैं। विचार कीजिए कि क्या बिना किसी दूसरे की सहायता के यह सब आपने प्राप्त किया है? अकेला मनुष्य कुछ नहीं कर सकता। यहां तक कि जीवन धारण करने में भी समर्थ नहीं हो सकता। पशु पक्षियों के बच्चे तो जन्म के थोड़े ही समय बाद अपने पैरों पर खड़े हो जाते हैं, परन्तु मनुष्य के बच्चे को बहुत काल तक दूसरों की सहायता की आवश्यकता होती है। दूसरों की सहायता, सहयोग और शिक्षा के बिना कोई भी सम्पत्ति प्राप्त नहीं हो सकती।

जब दूसरों के सहयोग से आपको वैभव प्राप्त होता है तो उसमें से जब थोड़ा अंश दूसरों को देने का अवसर आवे तो हिचकिचाहट करना उचित नहीं। दुनियाँ के सारे काम सहयोग और सहायता से चल रहे हैं। असंख्य प्राणियों की प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष सहायता से मनुष्य सम्पन्न बन पाता जो वैभव और शक्ति आज आपके पास है, [illegible] धन सम्पदा के आज स्वामी बने हुए हैं वह आप[illegible] भी तो किसी ने दिया ही है। आप साथ में धन पोट बांधकर तो लाये ही न थे? यदि नहीं! तो [illegible] आपको देने में संकोच करने की क्या आवश्यक[illegible] है आप भी दीजिये।

पहले लेने की अपेक्षा देना अधिक ठीक [illegible] यदि आप पहले लेने की नीति धारण करेंगे निश्च ही बहुत घाटे में रहेंगे और यदि लेकर न देंगे तो आप उस घाटे का अनुमान भी न ल[illegible] सकेंगे। क्योंकि कुँआ यदि अपना पानी देने [illegible] नीति के विरुद्ध, न देने का विचार करेगा तो पा[illegible] पड़ा २ अन्दर ही अन्दर सड़ जायगा और किसी काम का भी न रहेगा। यदि आपके पास पैसा और वह किसी के काम नहीं आता तो आप[illegible] पास पैसा होते हुए भी वह नहीं के बराबर है [illegible] इसके लिए जनता आपको कंजूस, ठग, हत बु[illegible] आदि विभूतियों से विभूषित करेगी और सम्भव वह पैसा जिसकी आप जी जान से रखवाली [illegible] रहे हैं किसी दिन चोर डाकुओं के हाथ लगेगा [illegible] आप हाथ मसलते ही रह जायेंगे।

इसे आप गांठ लगालें की "देने पर ही मिलेगा" किसान जब अनाज के कुछ बीज बो कर कई गु[illegible] प्राप्त कर सकता है तो इसमें सन्देह नहीं कि आ[illegible] कामिष्काम भाव से दिया हुआ आपके पास ही [illegible] गुना होकर लौट आवे।

नहीं है कि जो नंगा है वह पहुँचा हुआ योगी ही हो। वर्त्तमान भारतवर्ष में जहां रोटी नहीं वहाँ आत्मिक ज्ञान भी नहीं। मैं यह नहीं मानता कि वेदों और उपनिषदों जैसी पुस्तकों के स्वामी सब भारतवर्षी आत्मिकोन्नति से सम्पन्न हैं उन से प्रचीन ऋषियों के आत्मिक तल का तो पता चलता है परन्तु प्राचीन इतिहास वर्तमान परिस्थिति का स्थानापन्न तो नहीं हो सकता। बृहदारण्यक उपनिषत् हमको उस समय तक लाभ नहीं पहुँचा सकती जब तक हम में मैत्रेयी की वह स्पिरिट न हो जिस से प्रेरित हो कर उस ने कहा था:—"येनाहं नामृता स्यां किमहं तेन कुर्याम्"। अर्थात्—"जिससे मुझे अमृत की प्राप्ति नहीं होती उसका मैं क्या करूँगी" आज की भौतिक शिक्षा का हम क्या करेंगे?

एक पारसी की सत्कार्य में सहायता

श्रीपत्री भाई मैनेजर अखंड-ज्योति मथुरा, आपक[illegible] कर्मयोग गुरुकुल की स्थापना के विचार हमको बहु[illegible] पसंद है अगर उसकी स्थापना हो तो दो रुपय[illegible] मासिक हमारा चंदा स्वीकार करना।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

सर्व धर्मान्परित्यज्य ।

धर्म अधर्म के बड़े पेचीदा जंजाल में कभी कभी मनुष्य बड़ी बुरी तरह उलझ जाता है। धर्म का मर्म न समझने वाला व्यक्ति उसके ऊपरी आवरण पर ही मुग्ध हो रहता है और आटे को खोकर भुसी पल्ले बाँध लेता है। ऐसी अवस्था में धार्मिक व्यक्ति करीब करीब पागल या पिशाच बन जाता है। पागल तब बनता है तब साम्प्रदायिक कट्टरता पर लट्टू होकर केवल अपने को ही धर्मात्मा मानता हुआ अन्य मतावलम्बियों को अधर्मी ठहरा देता है। अपने महजब की बुरी बातों को भी अच्छी मानता है और दूसरों की अच्छी बातों को भी समझता है। कट्टर साम्प्रदायिकता उसकी बुद्धि को कुंठित कर देती है, निर्धारित कर्मकाण्ड या रीति रिवाजों को ही धर्म का संपूर्ण स्वरूप समझता हुआ उनका अन्य भक्त बन बैठता है, कट्टरता के किवाड़ बन्द करके अन्तर में निष्पक्षता का ईश्वरीय प्रकाश आना रोक देता। ऐसा धार्मिक व्यक्ति पागल के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है। जब यदि कट्टरता अधिक उग्र होकर आसुरी भावनाओं के साथ सम्बद्ध होजाती है तो मनुष्य पिशाच बन जाता है। इतिहास बताता है कि धर्म के नाम पर रक्त की होलियाँ खेली गई हैं। "हमारा मजहब कबूल करो या मृत्यु को आलिंगन करो" की नीति का बोलबाला चिरकाल तक रहा है और उसके फल-स्वरूप असंख्य निर्दोष व्यक्तियों से माता वसुंधरा को रक्त रंजित किया गया है। जरा जरा सी बात पर होने वाले साम्प्रदायिक दंगे, रुचि भिन्नता के कारण किये गये छोटे मोटे स्वतंत्र कार्यों पर होने वाले धार्मिक विरोध, उसी पिशाचत्व का दर्शन

मानव जाति की बाहरी और आन्तरिक शान्ति एवं सुव्यवस्था के लिए धर्म है इस मर्म को समझने वाला व्यक्ति धर्म मजहब या सम्प्रदायों की मर्यादाओं से लाभ उठाता है और मजहबों के नियमों पनियमों पर अपनी बुद्धि बेचकर लकीर का फकीर हो जाता है। ऐसे ही अन्ध भक्त अर्थ का अनर्थ करते हैं। वे सब धान बाईस पसेरी बेचते हैं, "टकासेर भाजी टकासेर खाजा" की उक्ति चरितार्थ करते हैं और एक ही लाठी से सब भेड़ों को हाँकते हैं। सारी दुनियां हमारे ही मजहब को मानने वाली बनजावे वे ऐसा प्रयत्न करते हैं और उस प्रयत्न के लिए अधर्म, अनर्थ सब कुछ करने को तैयार होजाते हैं। रूढ़ि वादी, पोंगा पंथी, अंध भक्त, ऐसे ही बुद्धि के हीन होते हैं जो अपनी मूढ़ता का दंड दुनियां को देते फिरते हैं। अपने चित्त भ्रम को न समझ कर दूसरों से सताते, झगड़ते और दुख देते फिरते हैं। ऐसे कट्टरावादियों का तथा कथित धर्म यथार्थ में अधर्म है क्योंकि वह किसीके लिए भी शान्ति दायक नहीं होता वरन् उसके भार से दबे हुए लोगों को नाना प्रकार के कष्ट क्लेश ही पाते रहते हैं।

विभिन्न मजहबों और सम्प्रदायों की ऐसी उलझन भरी स्थिति में से मनुष्य जाति को बचाने के लिए और मजहबी मतभेदों का एकीकरण करने के लिए भगवान की ओर से एक दिन दिव्य संदेश प्राप्त होता है कि-"सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज। अहत्वां पुंज पापेभ्यो मोक्षयस्माम माशुचः। सब धर्मों को त्याग कर अकेले मेरी शरण में आ। मैं तुझे पापों से छुड़ा कर मुक्ति प्रदान करूँगा, शोच मत करें।

धर्म का वह अंश जो संपूर्ण मानव जाति पर लागू होता है वास्तविक में और स्थायी है और जो अंश अमुक कर्मकाण्डों का आदेश मात्र करता है तथा अमक जाति एवं वर्ग का विशेष सुविधाऐ

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

परिवर्तन होनेवाला है। रीतिरिवाज और व्यवस्थायें जब पुरानी पड़ने के कारण अनुपयोगी बन जावें और वे उन उद्देश्यों की पूर्ति करने में असमर्थ हो जावें जिनके लिए कि वे बनाई गई थीं तो वे एक से व्यर्थ है। मोहवश मरे हुए मुर्दे को छाती से चिपकाये रहने से हानि और अपकार होने की ही संभावना है। साम्प्रदायिक के रीति रिवाजें जो समयानुसार अनुपयोगी हो गई हैं केवल कलह, मतभेद, अनीति और अन्ध विश्वास को ही बढ़ा सकती हैं। ऐसी अवस्था में पड़े रहना मनुष्य के लिए अत्यंत ही खतरनाक और भयानक है, भगवान इस खतरे से सावधान करते हैं और साम्प्रदायिक लोगों को अपनी उलझनें जहां की तहां छोड़कर पीछे लौट आने का आदेश देते हैं।

धर्म का प्रकाश ईश्वरीय अखंड-ज्योति में से प्राप्त होता है। हम जब आत्मा के दीपक को परमात्मा की ज्योति का स्पर्श कराके प्रज्वलित कर लेते हैं तो अँधेरा हट जाताहै और उस दीपक के प्रकाश में सच्चे के दर्शन होने लगते हैं। सच्चा धर्म मनुष्य मात्र की समान स्वाधीनता को स्वीकार करता है इसलिए किसीके स्वाभाविक अधिकारों में हस्तक्षेप नहीं करता। सत्य, प्रेम, न्याय में उसे धर्म का प्रतिभा दृष्टि गोचर होती है। सच्चा धार्मिक व्यक्ति अपने और दूसरों के कल्याण करने के मार्ग में कदम बढ़ाता है और उन्हीं में आनन्द प्राप्त करता है, व्यर्थ की सड़ी गली प्रथाओं में उसे कोई दिलचस्पी नहीं होती। असल में सच्चा धार्मिक वही है जो अपने और पराये उत्थान, एवं विकाश के लिए निरंतर प्रयत्न शील रहता है और आत्मा को परमात्मा की शरण में सोंपता है।

भगवान् का 'सर्वधर्मान्परित्यज्य वाला आदेश अधार्मिक होने का उपदेश नहीं देता वरन् सच्चे अर्थों में मनुष्य को धार्मिक बनाता है। आप साम्प्रदायिक जंजालों को छोड़कर ईश्वर की शरण

आत्म शुद्धि कीजिये।

(श्री. वटेश्वर दयालजी शास्त्री, [illegible])

जब मनुष्य दिन रात यही सोचने लगता कि मेरी बातों का प्रभाव दूसरों पर पड़े, तो क्य वह ऐसा करने से अपनी मर्यादा के बाहर नहीं जात है? मनुष्य केवल इतना ही क्यों न सोचे कि मे कर्तव्य क्या है! और मैं उसका कहाँ तक सचाई साथ पालन कर रहा हूं। जो सच्चा कर्तव्य पराय है, उसका प्रभाव अपने साथियों पर और दूस पर क्यों न पड़ेगा? पर यदि नहीं पड़ता है, क्या यह अपना दोष नहीं है? अवश्य, अप कर्तव्य परायणता में कमी है? अवश्यमेव अपनी तपस्या अधूरी है। और तपस्या क्या है? आ विचार और उच्चार के अनुसार आचार। सोचना चाहिये कि यदि मैं ऐसा क्रियावान हूं फिर मेरे बिना कहे ही मेरे साथ कर्तव्य पराय बनने का उद्योग करेंगे। यदि बिनोद पूर्ण व्यं स्नेह पूर्ण उपालम्भ और मधुर आलोचना से मे साथी सजग नहीं होता है और अपने कर्तव्य यथावत पालन नहीं करता है तो फिर कठोर ब उसके लिये बेकार हैं। कठोर बचन कहने की अपे मैं अपनी आत्मशुद्धि, और आत्म-ताड़ना का उद्यो क्यों न करूं। संसार में जो दोष और बुराई हैं, मेरी ही बुराई का प्रतिविम्ब मात्र है। मुझे अ इस जिम्मेदारी को खूब समझ लेना चाहिये। आत्म-शुद्धि बढ़ती हो, और दूसरों की सेवा क की वृत्ति दृढ़ होती हो, तो यह हद दर्जे की न और सचाई है यदि दूसरों से सेवा लेने की बढ़ती हो, अपने बड़प्पन का भाव तीव्र होता हो, यह अवश्य अहंकार और पाखण्ड है।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

दरिद्रता का निवासस्थान।

(श्री पं० तुलसीरामजी शर्मा सितारी)

ततोहृष्टमनां देवाममन्थुः क्षीरसागरम् ।
ततोऽलक्ष्मी समुत्पन्नाकालास्यारक्तलोचना ॥ ६ ॥
(पद्म पु० ४१६)

जब देवता प्रसन्न मन होकर क्षीरसागर मथने लगे तब अलक्ष्मी (दरिद्रता) उत्पन्न हुई जिनका काला मुख और लाल नेत्र थे ॥ ६ ॥

रूक्ष पिंगलकेशाच जरन्तीविभ्रती तनुम् ।
साचज्येष्ठाऽब्रवीद् देवान् किंकर्त्तव्यंमयेतिच ॥ १० ॥

रूखे पिंगलवाल, जरती देह को धारण करे, लक्ष्मी की बड़ी बहन (प्रथम उत्पन्नहोने के कारण) देवताओं से बोली मुझको क्या करना चाहिये ॥१०॥

देवास्तथा अ्रुवंस्तां च देवीं दुखस्यभाजनम् ।
येषां नृणांगृहेदेवी कलहः संप्रवर्तते ॥
तत्र स्थानं प्रयच्छामोवसज्येष्ठेशुभान्विता ॥ ११ ॥

तब देवता दुख की पात्र रूप तिनदेवीजी से बोले कि हे ज्येष्ठेदेवी ! जिन पुरुषों के घर में लड़ाई रहती है तहां पर हम तुहें स्थान देते हैं अशुभ युक्त होकर वहां निवास करो ॥ ११ ॥

निष्ठुरं वचनं ये च वदन्ति येऽनृतंनराः ।
संध्यायांये हिचाश्नन्ति दुखदातिष्ठतद् गृहे ॥ १२ ॥

जो पुरुष मिथ्या और निष्ठुर (रूखे) वचन कहते हैं और संध्याकाल में भोजन करते हैं उनके घर में हे दुख देने वाली ! तुम रहो ॥ १२ ॥

कपाल केशभस्मा स्थि तुषां गाराणि यत्रतु ।
स्थानं ज्येष्ठे तत्रतवभविष्यतिन संशयः ॥ १३ ॥

जहाँ पर ठीकरे, केश, राख, हड्डी, भूसी और अंगार हों अर्थात् मलिनता रहती है । हे ज्येष्ठे ! निःसंदेह वह तुम्हारा स्थान होगा सारांश यह है कि वहाँ दरिद्रता होगी ॥ १३ ॥

अकृत्वा पादयोर्धौतं ये चाश्नन्ति नराधमाः ।
[illegible]

जिस घर में नीच पुरुष बिना पैर धोबे भोजन करते हैं उस घर में दुख और दरिद्रता के देने वाः तुम सदैव रहो ॥ १४ ॥

गुरु देवाति थीनां च यज्ञदानं विवर्जितम् ।
यत्रवेदध्वनिर्नास्ति तत्रतिष्ठ सदाऽशुभे ॥ १८ ॥

हे अशुभे ! जहाँ पर गुरु, देवता और अतिथियों का आदर सत्कार न हो, यज्ञदान न हो और वेद-शास्त्र की ध्वनि न हो वहाँ पर सदैव तुम्हारा निवास हो ॥ १८ ॥

दम्पत्योः कलहोयत्र पितदेवार्चनं नवै ।
दुरोदररतायत्र तत्रतिष्ठ सदाशुभे ॥ १६ ॥

जहाँ स्त्री पुरुषों में लड़ाई रहती हो, पितर और देवताओं का पूजन न हो, जूए में आसक्ति हो । हे अशुभे ! तहाँ तुम्हारा निवास हो ॥ १६ ॥

परदाररतायत्र पर द्रव्यापहारिणः ।
विप्रसज्जन वृद्धानां यत्र पूजानविद्यते ॥
तत्रस्थाने सदातिष्ठ पापदारिद्यदायिनी ॥ २० ॥

जहाँ पराई स्त्रियों में प्रेम, पर द्रव्य के हरने वाले हों, ब्राह्मण, सज्जन और वृद्धों की पूजा न होती हो तिस स्थान में हे ! पाप और दरिद्रता की देने वाली तुम्हारा निवास हो ॥ २० ॥

सात्विक सहायतायें ।

इस मास ज्ञान यज्ञके लिए निम्न लिखित सहायतायें प्राप्त हुई हैं । इन उदार महानुभावों के लिए अखंड-ज्योति अपनी आन्तरिक कृतज्ञता प्रकट करती है ।

४) श्री मानकचन्द न्यादर जी, खरगोन ।
३) श्री गोण्डानारायणजी महाराज, देगलूर ।
२) श्री हजारीलालजी, शाहजहाँपुर ।
२) श्री सुशीलचन्द गुप्त, शाहाबाद ।
२) श्री चन्द्रभानजी गुप्त, शाहाबाद ।
२) श्री देवकृष्ण भदर, पिपरिया ।
१) पं० केशवलाल शर्मा, मुरार ।
१) श्री कालूरामजी यादव पटेल, कसरावद ।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

मनुष्य कौन है?

रचयिता—'अज्ञात'

विचार लो किमर्त्य हो, न मृत्यु से डरो कभी ।
मरो परन्तु यों मरो, कि याद जो करें सभी ॥
हुई न यों सुमृत्यु तो, वृथा मरे वृथा जिये ।
मरा नहीं वही कि जो, जिया न आपके लिये ॥
यही पशु-प्रवृत्ति है, कि आप आप ही चरे ।
वही मनुष्य है कि, जो मनुष्य के लिए मरे ॥

उसी उदार की कथा, सरस्वती बखानती ।
उसी उदार से धरा, कृतार्थ भाव मानती ॥
उसी उदार की सदा, सजीव कीर्ति कूजती ।
तथा उसी उदार को, समस्त सृष्टी पूजती ॥
अखण्ड आत्म भाव, जो असीम विश्व में भरे ।
वही मनुष्य है कि, जो मनुष्य के लिए मरे ॥

क्षुधार्त रंति देवने, दिया करस्थ थाल भी ।
तदा दधीचि ने दिया, परार्थ अस्थिजाल भी ।
उशी नर क्षतीश ने, स्वमांस दान भी किया ।
सहर्ष वीर कर्ण ने, शरीर चर्म भी दिया ॥
अनित्य देह के लिए, अनादि जीव क्या डरे ।
वही मनुष्य है कि, जो मनुष्य के लिए मरे ॥

सहानुभूति चाहिए, महा विभूति है यही ।
वशीकृता सदैव है, बनी हुई स्वयं मही ॥
मनुष्य मात्र बन्धु हैं, यही बड़ा विवेक है ।
प्रमाण भूत वेद है, पिता प्रसिद्ध एक है ॥
अनर्थ है कि बन्धु, हीन बन्धु की व्यथा हरे ।
वही मनुष्य है कि, जो मनुष्य के लिए मरे ॥

चलो अभीष्ट मार्ग में, सहर्ष खेलते हुए ।
विपत्ति विघ्न जो पड़ें, उन्हें धकेलते हुए ॥
घटे न हेल मेल हाँ, बढ़ें न भिन्नता कभी ।
अतर्क एक पन्थ के, सतर्क पन्थ हों सभी ॥
तभी समर्थ भाव है, कि तारता हुआ तरे ।
वही मनुष्य है कि, जो मनुष्य के लिए मरे ॥

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.